राँची विश्वविद्यालय के अन्तर्गत पीएच० डी० शोधोपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रारूप

(मानविकी संकाय)

स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची

"कौटिल्य के अर्थशास्त्र के आलोक में कालिदास की रचनाओं में राजधर्म : एक तुलनात्मक अध्ययन"

शोध निर्देशिका

डॉ० भारती द्विवेदी

सहायक प्राध्यापिका

स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग

राँची विश्वविद्यालय, राँची

शोधार्थी

सुमिता माइति

स्नातकोत्तर संस्कृत विभाग

राँची विश्वविद्यालय, राँची

1. भूमिका-

प्राचीन भारतीय मनीषियों का उद्देश्य था कि सम्पूर्ण विश्व में अधर्म का विनाश हो व धर्म की स्थापना हो। मानसिक, वाचिक, कायिक दृष्ट्या किसी को कष्ट पहुंचाना अधर्म है। मानवमात्र के सर्वतोभावेन सुख, शान्ति व उन्नति के लिए अधर्म पर धर्म की स्थापना आवश्यक है। अधर्माचरण का मूल कारण अरिषड्वर्ग (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य)हैं, इनको जीतना आवश्यक है तभी अधर्म का विनाश हो सकेगा और धर्म की स्थापना हो सकेगी।

पुरुषार्थ चतुष्ट्य में धर्म के पश्चात् अर्थ एवं काम का स्थान आता है। अर्थ व काम प्राप्ति धर्माधारित होनी चाहिए,ऐसा भारतीय मनीषा का मत रहा है। कौटिल्य मानते हैं कि अर्थ का बड़ा महत्व है। बिना परिश्रम भौतिक कामना पूरी करने की इच्छा से ही मनुष्य विविध पापों को करता है। अतः इन पापों के निवारण हेतु दण्डनीति की व्यवस्था की गई थी। दण्डनीति ही राजनीति है। वही राजधर्म है।

अनादि काल से राजधर्म की चर्चा धर्मशास्त्रों के माध्यम से की जाती रही है। राजधर्म धर्मशास्त्र का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो मुख्यतः राजा के अधिकारों, विशेषाधिकारों एवं उत्तरदायित्वों से सम्वन्धित है। प्रशासन-

व्यवस्था उचित रूप से संचालित हो इसके लिए न्याय-व्यवस्था भी विकसित हुई। राज्य की सुरक्षा के लिए सैन्यव्यवस्था सुदृढ़ की गयी, राज्य के सुचारु संचालन के लिए मंत्री परिषद विभिन्न विभागादि संगठित किए गए। यह सभी राजनैतिक चिंतन के विषय हुए। वैदिक साहित्य से लेकर रामायण, महाभारत, स्मृतियों तथा कालिदास आदि के ग्रन्थों में राजधर्म का विशद विवेचन प्राप्त होता है। चाणक्य का अर्थशास्त्र तो राजधर्म का आकर ग्रन्थ ही है कालिदास के रघुवंशम् महाकाव्य में भी राजधर्म का उल्लेख प्राप्त होता है। रघुवंशम् महाकाव्य में राजा के गुणों तथा कर्तव्यों का विस्तृत विवेचन किया गया है यथा ज्ञान होने पर भी महाराजा दिलीप मौन रहते थे, सामर्थ्यवान होने पर भी क्षमा करना, दानी होने पर भी आत्मश्लाघा न करना उनके विशिष्ट गुण थे जो एक राजा को औदात्य प्रदान करते हैं।

"ज्ञाने मौनं क्षमा शक्ती त्यागे श्लाघाविपर्ययः।

गुणा गुणानुवन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव" ।। (१.२२. रघुवंशम्)

कौटिल्य का अर्थशास्त्र राजधर्म की शिक्षा देता है तो कालिदास के रचनाओं में उनका पालन घटित होना दृष्टिगत होता है, यह विषय शोध हेतु पर्याप्त रुचिकर होता है। कालिदास के रचना संसार के मध्ये त्वरित् होते ज्ञान के विस्तार को भी दर्शता है।

वर्तमान परिवेश में राजनीति की शुचिता भी संकट में है ऐसी परिस्थिति में इस विषय पर शोध प्रासंगिक भी है।

2. अनुसन्धान क्षेत्र –

प्रस्तावित शोध विषय में विशेषत: आचार्य कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र को आधार करके महाकवि कालिदास के ग्रन्थों में राजधर्म विषयक आलोचना किया गया है।

राजधर्म एक व्यापक विषय है। जिसकी चर्चा प्राचीन काल से लेकर आज तक निरन्तर चली आ रही है। राजधर्म राज्य का आधार स्तम्भ है। राज्य की व्यवस्था को बनाने के लिये, उसके विकास एवं उत्कर्ष के लिये एवं आदर्श राज्य के निर्माण में राजधर्म का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

अर्थशास्त्र एवं कालिदास के ग्रन्थों में प्रतिपादित विविध राजधर्म विषयक आलोचना श्रमसाध्य है, तथापि मैंने महाभारत, रामायण, पुराण, स्मृतियाँ, महाकाव्य, नाटक, शुक्रनीतिसार, तथा विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, विभिन्न शोध-प्रबन्ध, एवं विकिपीडिया पर उपलब्ध सामग्री को आधार बनाकर यह शोध-प्रबन्ध प्रारम्भ किया है।

3. शोध का उद्देश्य –

राष्ट्र की सुदृढ़ता के लिए राजनीति में शुचिता भी अत्यधिक आवश्यक होती है, जिसका दिन प्रतिदिन क्षरण दृष्टिगत हो रहा है। ऐसी परिस्थिति में राजधर्म का पुनः पुनः चिन्तन, मनन एवं अन्वेषण अत्यावश्यक प्रतीत होता है। और मेरे संज्ञान के अनुसार "कौटिल्य अर्थशास्त्र के आलोक में कालिदास के रचनाओं में राजधर्म : एक तुलनात्मक अध्ययन" इस विषय को लेकर कोई भी शोधकार्य अद्यावधि नहीं हुआ है। इसी कारण शोधकार्य के लिए इस विषय का चयन मैंने किया है।

4. शोध विषय का औचित्य एवं महत्व –

धर्मशास्त्र के अन्तर्गत राजधर्म एक विशिष्ट महत्त्व रखता है। इसीलिए सभी धर्मशास्त्रकारों ने इसका सांगोपांग विवेचन किया है।

महाकवि कालिदास ने रघुवंशम् महाकाव्य में राज्य के सप्तांगों का वर्णन किया है। यहाँ पर जनपद के लिए जन या राष्ट्र शब्दों का प्रयोग भी हुआ है। दण्ड के लिए बल तथा दुर्ग के लिए पुर का प्रयोग हुआ है। आचार्य कौटिल्य ने भी अर्थशास्त्र में सप्तांग राज्य के विषय में विस्तार से विवेचन किया है।

प्राचीनकाल से धर्मशास्त्र के अन्तर्गत राजधर्म की चर्चा होती रही है। आचार्य कौटिल्य ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ अर्थशास्त्र की परिभाषा देते हुए लिखा है **"मनुष्याणां वृत्तिरर्थः"**। राज्य की उत्पत्ति समाजनानुबन्धवाद सिद्धान्त के

आधार पर हुई है कि प्रजा में राजा के महत्व स्थापना करने के लिए प्रजा को राजा की आर्थिक सहायता करनी चाहिए। महाकवि कालिदास ने भी अपने ग्रन्थों में राजा के इसी गुण को दर्शाया है। रघुवंशम् महाकाव्य में कालिदास ने लिखा है राजा प्रजा के कल्याण हेतु कर ग्रहण करते थे –

"प्रजानामेव भुत्यर्थं ताभ्यो बलिमग्रहीत्।

सहस्रगुणमुत् स्रष्टुमादरत्ते हि रसंरविः"।। (१.१८. रघुवंशम्)

इस प्रकार अर्थशास्त्र में करों द्वारा प्राप्त धन से राजागण प्रजा की रक्षा करते हुए उनके कल्याण के साधना जुटाते आए हैं।

वृक्ष को विकसित होने के लिए उसमें जड़ों का होना आवश्यक हैं ठीक उसी प्रकार एक राज्य को विकसित करने के लिए राजधर्म में भी पृथक् पृथक् अंगो का होना आवश्यक है।

राजधर्म के महत्व का प्रतिपादन करने वाले अनेक उद्धरण राजनीतिक चेतना के उज्जवल दर्पण हैं। इनमें राजा को व्यवस्था स्थापित करने, आर्थिक प्रगति का निर्देशन करने तथा सामाजिक व्यवहार का नियन्त्रण करने के द्वारा क्रमशः धर्म, अर्थ और काम इन तीनों पुरुषार्थों की साधना के द्वारा चौथे पुरुषार्थ या मोक्ष की प्राप्ति के लिए मार्ग प्रशस्त करने वाला कहा गया है।

राजधर्म में ही सम्पूर्ण त्यागों की पूर्ति होती है, सभी दीक्षाएं राजधमों में संयुक्त होती हैं और सभी विद्याओं का समन्वय राजधर्म में केन्द्रित हैं।

"सर्वे त्याग राजधर्मेषु दृष्टाः सर्वा दीक्षा राजधर्मेषु युक्ताः।

सर्वा विद्या राजधर्मेषु योक्ताः सर्वे लोका राजधर्मे प्रविष्टाः"।।

(२६, शान्तिपर्व, महाभारत)

5. शोधप्रविधि –

प्रस्तुत शोधकार्य में निष्कर्ष प्राप्ति हेतु विश्लेषणात्मक पद्धति का आश्रय लिया जाएगा।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र वर्णित राजधर्म के आलोक में कालिदासीय ग्रन्थो में राजधर्म का वर्णन किया जाएगा। एवं यथा स्थान राजधर्म विषयक अन्य ग्रन्थों का अध्ययन भी किया जाएगा।

इस प्रकार प्रस्तावित शोध-प्रबन्ध में विश्लेषण एवं संश्लेषणात्मक के साथ ही व्यख्यात्मक, तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक पद्धतियों का प्रयोग किया जाएगा।

उपसंहार –

कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं कालिदास के ग्रन्थों में वर्णित राजधर्म के उद्भव के साथ व्यवस्थित रूप से न्याय-व्यवस्था की उद्भावना वैदिक काल से ही प्रारम्भ हो गया था। कौटिल्य तथा कालिदास के ग्रन्थों में राज्य के सप्तांगों में राजा या स्वामी को सर्वप्रमुख स्थान दिया गया है। राजा राज्य की धुरी या केन्द्रविन्दु है। स्वामी राज्य की आत्मा है, वह सम्पूर्ण राज्य का प्रतिनिधित्व

करता है। राजा की व्यक्तिगत योग्यता, चारित्रिक गुण तथा उसकी नीतियों पर ही शासन की सफलता निर्भर होती है।

अनेक ग्रन्थकारों ने अराजक दशा या मात्स्यन्याय की प्रतिकार स्वरुप राजधर्म की उत्पत्ति मानी है। समयक्रम के साथ राजा के अधिकारों का विकास हुआ है।

निष्कर्षतः कौटिल्य एवं कालिदास कालीन राजधर्म व्यवस्था वहुत सरल तथा सर्वजन सुलभ थी। न्यायार्थी को न्याय सहज और अविलम्बित प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी। कौटिल्य का कहना है कि न्याय शीघ्र प्राप्त होनी चाहिए। न्याय में विलम्ब होने से लोकहित को हानि पहुंचने की सम्भावना होती है।

अतः राजधर्म का मुख्य उद्देश्य राज्य में उपस्थित समस्त प्रकार की विपत्ति का विनाश करना तथा प्रजाजनों के मनों में पापों और अपराधों के प्रति भय तथा वितृष्णा उत्पन्न करना एवं पीड़ितों को न्याय दिलाना।

6. प्रस्तावित अध्याय विभाजन –

भूमिका - प्रस्तुत शोध की आवश्यकता/उद्देश्य, अर्थशास्त्र का तात्पर्य, राजनीति का स्वरुप, राजधर्म का परिचय, राजधर्म का महत्व, राजनैतिक चिन्तन का उद्भव, प्राचीन राजनीतिक ग्रन्थों के प्रणेता।

प्रथम अध्याय - प्राचीन भारतीय राजनैतिक परम्परा में राजधर्म।

वैदिकयुग में राजधर्म।

रामायण में राजधर्म।

महाभारत में राजधर्म ।

पुराण में राजधर्म।

स्मृतिग्रन्थों में राजधर्म।

द्वितीय अध्याय - अर्थशास्त्र के प्रणेता का सामान्य परिचय।

काल एवं जीवन परिचय, अर्थशास्त्र का रचनासमवन्धी विवाद, विषयवस्तु, अर्थशास्त्र का महत्व ।

तृतीय अध्याय - कौटिल्य के अर्थशास्त्र के अनुसार राजधर्म।

राज्य की उत्पत्ति, राजा का स्वरुप, राजतंत्र का स्वरुप, राज्याभिषेक, राजा के गुण, शिक्षा, दिनचर्या, कर्तव्य, शक्तियां एवं मर्यादाएं, उत्तराधिकार नियम, सप्तांग सिद्धान्त, राज्य के कार्य, मंत्री-परिषद, गुप्तचर व्यवस्था, दण्ड सिद्धान्त, आर्थिक नीति, कोष, दुर्ग, राज्य, षाड्गुण्यमन्त्र, उपाय, सैन्य-बल, युद्ध, दूत, अन्ताराज्य सम्बन्ध ।

चतुर्थ अध्याय - कालिदास का सामान्य परिचय।

काल, जीवनपरिचय, कृतित्व ।

पंचम अध्याय - कालिदास के नाटकों में राजधर्म।

विक्रमोर्वशीयम में राजधर्म।

मालविकाग्निमित्रम में राजधर्म।

अभिज्ञानशकुन्तलम में राजधर्म।

षष्ठ अध्याय - कालिदास के काव्यों में राजधर्म।

रघुवंशम में राजधर्म।

कुमारसम्भवम में राजधर्म।

मेघदूतम में राजधर्म।

सप्तम अध्याय - कालिदास के ग्रन्थों में प्रतिपादित राजधर्म की वर्तमानकालिक प्रासंगिकता।

उपसंहार

संदर्भ सूची

नोट – प्रस्तुत शोधप्रबन्ध का भावी प्रारूप उपर्युक्त होगा, जिसमें अध्ययनोपरान्त परिवर्तन सम्भाव्य है।

संदर्भ सूची –

१. शास्त्री, गंगाप्रसाद,-"अर्थशास्त्र", महाभारत कार्यालय, दिल्ली, १६६७/

२. महाकवि कालिदास, "रघुवंशम्", चौखाम्भा सुरभारती प्रकाशन, १९५६।

३. कांणे, पी वी,-"धर्मशास्त्र का इतिहास", उत्तरप्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, १६६५।

४. महाकवि कालिदास "मालविकाग्निमित्रम्", चौखाम्बा सुरभारती- प्रकाशन, वाराणसी, २००५।

५. महाकवि कालिदास "अभिज्ञानशकुन्तलम्", चौखाम्भा सुरभारती-प्रकाशन, वाराणसी।

६.शास्त्री, सुरेन्द्रनाथ-"विक्रमोर्वशीयम्", निर्णयसागरमुद्रणालय, मुंबई, १९४२।